International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(2): 298-303

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(2): 298-303
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 05-01-2020
Accepted: 26-02-2020

शत्रुघ्न कुमार
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, ल.न.मि.वि. दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
शत्रुघ्न कुमार
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, ल.न.मि.वि. दरभंगा, बिहार, भारत

वाल्मीकीय रामायण के परिप्रेक्ष्य में महाकवि कालिदास की रामकथा का अध्ययन

शत्रुघ्न कुमार

सारांश
महाकवि कालिदास ने अपनी रामकथा में वाल्मीकीय रामकथा से अनेकत्र नवीनता प्रदर्शित की है। चाहे रघुवंशी नृपों के वंशानुक्रम की भिन्नता हो अथवा अंधमुनि–पुत्रवध–कथा का कथात्मक सौंदर्य या चित्र–दर्शन की उद्‌भावना हो अथवा पुष्पक विमान से अयोध्या आते श्रीरामजी द्वारा प्रकृति का अनुपम सौंदर्यीकरणादि हो। वे कई स्थलों पर अनुपम कथात्मक–काव्यात्मक सौंदर्य दर्शाते हैं तो अनेकत्र वे कथात्मक–प्रवाह की सरसता में वाल्मीकीय रामकथा से पीछे दिखायी पड़ते हैं। अगर समग्रता की दृष्ट से देखें तो उनके कथानक का कथात्मक–सौंदर्य वाल्मीकीय रामायण से न्यून दिखायी देता है किन्तु काव्यात्मकता की दृष्टि से उनका यह प्रयत्न न केवल रामकथा के प्रतिष्ठापकों के लिए वरन् संपूर्ण संस्कृत जगत् के लिए स्पृहणीय है।

प्रस्तावना
महाकवि कालिदास ने 'रघुवंषम्' में रामकथा की रचना करते हुए रामकथा–परंपरा को एक नया आयाम दिया है। कालिदास की रामकथा का कथात्मक स्वरूप वाल्मीकीय रामायण पर आधारित होने के बावजूद कतिपय परिवर्तनों–परिवर्धनों से युक्त है, जो उनकी रामकथा को नवीनता प्रदान करती है। प्रस्तुत आलेख में कालिदास की रामकथा की वाल्मीकीय रामकथा से नवीनता के स्वरूपों की विवेचना की गयी है।
भारतीय संस्कृति के प्राणभूत तत्व 'सत्यं शिवं सुंदरम्' को अपनी मधुर काव्यमय वाणी से सिक्तकर भारतीय सांस्कृतिक चेतना का पुनर्जागरण करनेवाले कविकुलभूषण कालिदास वस्तुतः ऐसे शरदिन्दु हैं, जिनकी काव्य–रश्मियाँ प्राचीन भारतीय जनमानस की अंतरात्मा को आलोकित कर जीवन में प्रेम, सौंदर्य और मानवीय मूल्यों की अद्‌भुत छटा बिखेरने में पूर्ण समर्थ हैं। वे आदिकवि महर्षि वाल्मीकि के बाद संस्कृत–काव्य–गौरव के ध्वजवाहक और 'सुकुमार मार्ग' के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि हैं। वे न केवल हमारे राष्ट्रीय कवि वरन् त्याग, तपस्या और तपोवन का संदेश देनेवाले विश्वशांति के काव्य–पुरोधा भी हैं। भारतीय मान्यता के अनुसार उनकी बराबरी करनेवाला कोई कवि आज तक नहीं हुआ है। इसलिए कहा गया है:

पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे सुमध्यमाधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।

निःसंदेह कालिदास कवियों में शिरोमणि हैं। उनकी काव्य–रश्मियाँ संस्कृत–साहित्य की अनुपम धरोहर है। उनके प्रगाढ़ सौष्ठव को दर्शाते हुए हजारीप्रसाद द्विवेदीजी कहते हैं कि "भारतीय धर्म, दर्शन, शिल्प और साधना में जो कुछ उदात्त है, जो कुछ दृप्त है, जो कुछ महनीय है और जो कुछ ललित और मोहन है उनका प्रयत्नपूर्वक सजाया–सँवारा रूप कालिदास का काव्य है।"[1]
वस्तुतः रामकथा की महान् परंपरा के प्रतिष्ठापकों की दृष्टि से देखें तो रामकथा के विकास में महाकवि कालिदास का योगदान अविस्मरणीय है। वे आदिकवि वाल्मीकि के बाद रामकथा की अनुपम गाथा को अमूल्य वाणी प्रदान करने वाले महान विभूतियों में से है। उन्होंने महाकाव्य 'रघुवंषम्' के मध्य में रामकथा की मन–मोहक छटा बिखेरी है। 'रघुवंषम्' के नौवें सर्ग में दशरथ–कथा और दसवें से पन्द्रहवें सर्ग तक संपूर्ण रामकथा की गौरवशाली प्रतिष्ठा की गयी है।
कतिपय कथात्मक परिवर्तनों–परिवर्धनों के बावजूद महाकवि कालिदास की रामकथा का मूलाधार वाल्मीकि रामायण ही है। वे वाल्मीकीय रामायण की कथाभूमि को अपनी रचनाशीलता एवं काव्यात्मकता से विभूषित करते हुए 'रघुवंषम्' में सामासिक रूप में संपूर्ण रामकथा की सृष्टि की है। 'रघुवंषम्' में राजा रामजी के साथ–साथ उनके पूर्ववर्ती एवं परवर्ती रघुवंशी नृपों के चरित्रों की भी

उद्भावना की गयी है। इसके प्रारंभ में कालिदास ने अपने पूर्ववर्ती कवियों द्वारा इस वंश के यशोगान की महानता दर्शाते हुए अपने प्रस्तुत प्रयत्न को मणियों के मध्य सूत्र के सदृश बताया है–

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूव सुरिभिः।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः।।[2]

यद्यपि महाकवि कालिदास की रामकथा का कथात्मक आधार वाल्मीकीय रामायण है, किंतु कालिदास ने अपनी मौलिक चेतना के दिव्य विलास से रामकथा के स्वरूप को कई स्तरों पर सजाया–सँवारा और एक नया आयाम प्रदान किया है। वाल्मीकीय रामकथा की कथात्मकता से इनकी रामकथा की कथात्मकता के परिवर्तनों–परिवर्धनों के स्वरूप को हम इस प्रकार देख सकते हैं–

1. रघुवंशी नृपों का वंशानुक्रम

महाकवि कालिदास ने 'रघुवंशी नृपों' के वंशानुक्रम का वर्णन वाल्मीकीय रामायण से भिन्न रूप में किया है। यह वंशानुक्रम भास के नाटकों के सदृश वर्णित है। 'रघुवंषम्' में राजा दिलीप के उपरांत उनके सुपुत्र के रूप में महाराज रघु का उल्लेख है। रघु के पुत्र अज, अज के पुत्र दशरथ और दशरथ के सुपुत्र श्रीराम–लक्ष्मणादि हैं। श्रीराम के पुत्र कुश–लव हैं।

महर्षि वाल्मीकि के अनुसार दिलीप के पुत्र भगीरथ, भागीरथ से ककुत्थ और ककुत्थ से रघु का जन्म हुआ है। रघु के उपरांत १२वें पीढ़ी के रूप में अज का जन्म हुआ। वे नाभाग के पुत्र थे। अज से दशरथ और दशरथ से रामजी–लक्ष्मणादि का जन्म हुआ।

वाल्मीकि रामायण और रघुवंषम् में दशरथ की वंशावली की भिन्नता एक विवादास्पद स्थिति उत्पन्न करती है। कालिदास से पूर्व हरिवंश पुराण तथा प्रतिमानाटकम् में रघुवंषम् के समान वंशावली मिलती है। कालिदास के परवर्ती साहित्य–निधियों में भी 'रघुवंषम्' के सदृ श वंशावली दिखती है। यथा– अग्निपुराण, लिंगपुराण, ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण का गौडीय पाताल खण्ड, भविष्यपुराण, उदारराधव, कृ त्तिवास रामायण, तोरवे रामायण आदि। इन साहित्यों में 'रघुवंषम्' की वंशावली की प्रतिष्ठा करना वस्तुतः कालिदास की वंशावली के क्रम की प्रमाणिकता पर ही बल देते हैं। इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि श्रीराम की वंशावली वाल्मीकीय रामायण में गृहीत क्रम से भिन्न रूप में भी प्रचलित रही है, जिसे कालिदास ने अपनाया है और इसे भी अन्य अनेक ग्रंथों में भी अपनाया गया है। हालाँकि इससे विभ्रम की स्थिति और बढ़ती ही है, क्योंकि इस वंशावली में ऐसे अनेक नाम नहीं है, जिनका भारतीय सांस्कृतिक गाथा में अनेकत्र उल्लेख है। इस पर विवेचन यहाँ न तो संभव है न उचित। यह एक स्वतंत्र विवेच्य प्रसंग है।

2. अंधमुनि–पुत्रवध कथा

महाकवि कालिदास ने अंधमुनि–पुत्रवध कथा, जो कालांतर में परवर्ती साहित्य में श्रवण कुमार के नाम से प्रचलित हुआ को अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु इसमें कुछ कथात्मक परिवर्तन किये हैं। कालिदास ने राजा दशरथ को तीनों रानियों के साथ विवाहोपरांत शिकार खेलने की इच्छा व्यक्त करवायीं। राजा दशरथ अपने साथियों के साथ शिकार पर गये और एक दिन अकेले रुरुमृग का पीछा करते हुए तमसा नदीतट पर पहुँचे प्तमसा नदी में अंधमुनि–पुत्र अपने अंधे माता–पिता के लिए घड़े में पानी भर रहा था, धड़ा भरते समय जो गंभीर शब्द उत्पन्न हुआ उसको हाथी का शब्द समझकर दशरथ ने उस पर शब्दभेदी बाण चला दिया। बाण लगते ही वह करुण–क्रन्दण करने लगे। दशरथ वहाँ पहुँचकर अपने अपराध से भयभीत होकर मुनिपुत्र की इच्छानुसार उसे अपनी गोद में लेकर उनके माता–पिता के समक्ष पहुँचे। उनके माता–पिता के कहने पर दशरथ ने उसे लगे तीर को निकाला और तीर निकलते ही उनके प्राण भी निकल गये। विलाप करते हुए उसके पिता ने अपनी आँसू के जल को चुल्लू में भरकर राजा दशरथ को पुत्र–वियोग में मरने का शाप दे दिया–

"दिष्टान्तमाप्स्यति भवानपि पुत्रशोका–
दन्त्ये वयस्यहमिवेति तमुक्तवन्तम्।"[3]

इसके बाद वह मुनि–दम्पत्ति पुत्र के साथ चिताग्नि में जलकर प्राण–त्याग दिये। राजा दशरथ मुनि–शाप को वरदान मान पुत्र–प्राप्ति की संभावना जान अपने राजभवन लौटे।

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार दशरथजी जब युवराज होते हैं तब सरयू नदी के तट पर शिकार खेलने के क्रम में घड़े द्वारा जल भरने की ध्वनि को हाथी के द्वारा जल पीना समझकर अंधमुनि–पुत्र को शब्दभेदी बाण मार देते हैं । सरयू तट पर अंधमुनि पुत्र के इच्छानुसार उनके बाण निकालते हैं, जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है। दशरथजी जल लेकर अपने अपराध से भयभीत होकर उनके अंधे माता–पिता के आश्रम पर जाते हैं और अपने अपराध को स्वीकार करते हैं। अंधमुनि दम्पति विलाप करते हुए दशरथजी के साथ सरयू तट पर अपने मृत–पुत्र के पास जाते हैं। उसे जलाञ्जलि देते हैं। इसी समय पर वह मुनिकुमार माता–पिता की सेवा के फलस्वरुप इंद्र के साथ देवलोक की ओर चले जाते हैं। तदन्तर मुनि विलाप करते हुए दशरथ को पुत्रवियोग जनित दुःख से कालकलवित होने का शाप देते हैं–

"पुत्रं व्यसनजं दुःखं यदेतन्मय साम्प्रतम्।
एवं त्वं पुत्रशोकेन राजन् कालं करिष्यसि।।[4]

इसके बाद वह दंपति चिताग्नि में कूदकर अपने प्राण त्याग देते हैं। वस्तुतः आदिकवि ने इस कथानक की उद्भावना मरणासन्न महाराज दशरथ के मुख से महारानी कौशल्या के समक्ष करवाया है, जब श्रीरामजी सीताजी एवं लक्ष्मणजी के साथ वनवास को १४ वर्षों के लिए जाते हैं। पुत्र–वियोग के निर्मम दुःख से मरणासन्न दशरथजी की विह्वल दशा को अंधे माता–पिता के इकलौते पुत्र की मृत्यु के साथ जोड़कर आदिकवि ने अद्भुत भावप्रणवता की सृष्टि की है। इसके साथ–साथ इंद्र के साथ मुनि–पुत्र को देवलोक पहुँचाकर माता–पिता की सेवा की गौरवता को भी चित्रित किया गया है ।

महाकवि कालिदास ने इस कथानक की कलापूर्ण काव्यात्मक प्रतिष्ठा की है। कालिदास ने मुनिकुमार की मृत्यु उनके माता–पिता के समक्ष करवाया है, जो करुणता की प्रकर्षता द्योतित करती है। साथ–ही आँसू के जल को चुल्लू में लेकर शाप देते हुए अंध–मुनि का चित्रण सचमुच सहृदय काव्य–प्रेमियों के हृदय को करुणता से भर देता है। इसके अलावा कालिदास ने दशरथ के शिकार–शौक की अद्भुत झाँकी दिखलायी है। शिकार क्रम में महाकवि कालिदास ने जो प्रगाढ़ काव्यात्मकता का निदर्शन करवाया है, वह संस्कृत साहित्य में विरल है। हरिण का शिकार करने के क्रम में दशरथ अपना बाण इसलिए रोक लेते हैं कि उसकी प्रियतमा (हिरणी) उनकी रक्षा हेतु उसके सामने आ जाती है। प्रियतमा का प्रेम देखकर दशरथ का हृदय भर जाता है–

लक्ष्मीकृतस्य हरिणस्य हरिप्रभावः प्रेक्ष्य स्थितां सहचरीं व्यवधाय देहम्।

आकर्णकृष्टमपि कमितया स धन्वी
बाणं कृपामृदुमनाः प्रतिसंजहार।।[5]

राजा दशरथ ने दूसरे मृगों पर भी बाण नहीं छोड़ते हैं, क्योंकि भयाकुल उन मृगों के चंचल नेत्रों को देखकर उनकी प्रियतमा की याद आ जाती है और उसका करुणार्द्र हृदय किसी भी हिरण को मारने की स्वीकृति नहीं देता है–

तस्यापरेष्वापि मृगेषु शरान्मुमुक्षोः
कर्णान्तमेत्य बिभिदे निबिडोऽपि मुष्टिः।
त्रासातिमात्रचटुलैः स्मरतः सुनेत्रैः
प्रौढप्रियानयनविभ्रमचेष्टितानि।।[6]

महाकवि कालिदास ने इस प्रसंग में अनुपम काव्यात्मक के साथ–साथ कथाप्रवाह की सृष्टि की है, जिससे यह कथानक अधिक प्रभावशाली दिखती है। वाल्मीकीय रामायण में इस प्रसंग में कथात्मक सहजता ज्यादा दिखती है, वहीं कालिदास ने काव्यात्मक–कौशल को ज्यादा प्रभावकारी बनाया है।

3. अहल्या–प्रसंग

महाकवि कालिदास ने अहल्या–प्रसंग का वर्णन केवल दो श्लोकों में किया है। उनके अनुसार मिथिला जाने के क्रम में महर्षि विश्वामित्र के साथ रामजी और लक्ष्मणजी संध्या के समय होने के कारण गौतममुनि के आश्रम के सुंदर वृक्षों के नीचे रुक गये थे। इस आश्रम में अहल्या थोड़ी देर के लिए इंद्रपत्नी बन गयी थी। गौतम मुनि के शाप से अहल्या पत्थर बन गयी थी और रामजी की कृपा से वह शाप मुक्त हो पायी।

वाल्मीकीय रामायण में बालकाण्ड एवं उत्तरकाण्ड दोनों में इस प्रसंग की चर्चा की गयी है। बालकांड की कथा के अनुसार इंद्र अहल्या के समक्ष गौतममुनि के वेश में आता है तो उसे अहल्या पहचान लेती है और इच्छानुसार इंद्र के साथ समागम करती है। गौतम मुनि इंद्र को अपने वेश में देखकर और सब समझकर उसे अंडकोष रहित होने का शाप दे देते हैं। अहल्या को हजारों वर्षों तक केवल वायु पीकर अथवा उपवास के द्वारा कष्ट उठाकर राख में समस्त प्राणियों से अदृश्य रहकर पड़े रहने का शाप दे दिया। श्रीरामजी के आगमन और उनका आतिथ्य करने पर शाप–मुक्ति की बात कही गयी है। रामजी को उनके आश्रम में आतिथ्य ग्रहण कर उन्हें मुक्त करते हैं।

उत्तरकाण्ड में मेघनाद द्वारा पराजित एवं बंदी इंद्र को मुक्त करवाने के उपरांत उसके पराजय का कारण बताते हुए ब्रह्माजी इंद्र द्वारा पूर्वकाल में किसी दुष्कर्म करने की बात करते हैं। इसके अनुसार ब्रह्मा जी अतिसुंदरी अहल्या का विवाह परमतपस्वी गौतम मुनि से करवाते हैं, जिससे क्रोधित एवं कामपीड़ति होकर इंद्र गौतममुनि के वेश में उसके साथ दुष्कर्म करता है। गौतम मुनि अपने आश्रम में इंद्र को अपने वेश में देख और सब समझकर शाप देते हैं कि तुम्हें शत्रु का बंदी बनकर बनना होगा। इसी कारण इंद्र मेघनाद का बंदी बनता है। साथ–साथ गौतम मुनि कहते हैं जो जारभाव से पापाचार करेगा, उस पुरुष पर उस पाप का आधा भाग पड़ेगा और आधा तुम पर पड़ेगा, क्योंकि इससे प्रवर्तक इंद्र तुम्हीं हो। तुम्हारा स्थान स्थिर नहीं होगा। गौतम मुनि अपनी पत्नी को शापित करते हुए उसे आश्रम में अदृश्य होकर रहने की बात करते हैं एवं उसे रूप–सौंदर्य से भ्रष्ट कर देते हैं। अहल्या मुनि से विनती करती है कि अनजाने में उससे यह अपराध हुआ, क्योंकि वह इंद्र को पहचान नहीं सकी। तब गौतम मुनि श्रीरामजी के दर्शन–आतिथ्य से शाप–मुक्ति की बात कहते हैं।

वस्तुतः बालकाण्ड की कथा से उत्तरकाण्ड की कथा काफी भिन्न है। बालकाण्ड में अहल्या इंद्र को पहचानने के उपरांत दुराचार करती है, जबकि उत्तरकाण्ड में इंद्र द्वारा छलपूर्वक वेश बदलकर अवैध संबंध स्थापित करने की बात कही गयी है। यहाँ अहल्या इंद्र को नहीं पहचानती है। उसे गौतम ऋषि मानकर उसके साथ संबंध स्थापित करती है। बालकाण्ड में इंद्र को शाप देते हुए उसे अंडकोष रहित बनाया जाता है, जबकि उत्तरकाण्ड में युद्धबंदी होने के साथ जारभाव के पापाचार के आधे पाप का भागी बनाया जाता है। कथाक्रम की प्रवाहशीलता एवं मानव–प्रकृति का तत्कालीन चित्रण की स्वाभाविकता से देखे तो बालकाण्ड की कथा ज्यादा स्वाभाविक लगती है। आदिकवि कहते हैं कि अहल्या ने सोचा कि उसके सौंदर्य से प्रभावित होकर देवराज इंद्र भी उसे चाहते हैं। इस कौतूहलवश उसने उसके साथ समागम का प्रस्ताव स्वीकार कर ली–

मुनिवेषं सहस्त्राक्षं विज्ञाय रघुनन्दन।
मतिं चकार दुर्मेधा देवराजकुतूहलात्।।[7]

महाकवि कालिदास ने भी बालकाण्ड की कथा को ही रेखांकित किया है। कालिदास ने अहल्या को इंद्र पत्नी बनने की बात बतायी है। पत्नी तो इच्छानुसार ही इस संदर्भ में बनी होगी। कालिदास ने इसे अधिक स्पष्ट नहीं किया है।

आदिकवि ने बालकाण्ड एवं उत्तरकाण्ड दोनों जगहों पर अहल्या को शापित होकर अदृश्य होकर उसी आश्रम में कष्टपूर्वक रहते हुए तपस्या करने एवं श्रीरामजी के आगमन की राह देखने की बात बतायी है। यह शाप युक्तिप्रद–सा लगता है कि अहल्या अन्य प्राणियों से अलग–थलग–सा अर्थात् अदृश्य होकर जीवन जीती होगी और श्रीरामजी ने उनका आतिथ्य–ग्रहण कर उसे मुक्ति प्रदान कर दी हो। किंतु महाकवि कालिदास उसे शापित होकर पत्थर बनने की बात कहते हैं, जो कथात्मक स्वाभाविकता को खंडित करते हुए दिखायी देता है। 'रघुवंषम्' में ही सर्वप्रथम अहल्या को पत्थर बनने का वर्णन मिलता है। फ़ादर कामिल बुल्के कहते हैं कि "वाल्मीकि के बालकाण्ड में गौतम यह भी कहते हैं कि राम का आतिथ्य–सत्कार करने के पश्चात् तुम पूर्ववत् अपना शरीर धारण कर मेरे पास आओगे अर्थात् अपने पूर्वरूप में मेरे साथ रहोगी–स्वं वपुर्धारयिष्यसि (४८, ३२)। संभवतः इस वाक्यांश के कारण यह धारणा उत्पन्न हुई कि अहल्या शापवश शिला बन गयी थी। शाप का यह परिणाम पहले–पहल रघुवंश (११,३४) में पाया जाता है।"8 कालिदास की अहल्या का शिला में बदलने की कथा परवर्ती रामकथा–साहित्य में व्यापक रूप में मिलता है। नृसिंह पुराण, स्कंदपुराण, जानकीहरण, कथासरित्सागर, महानाटक, उदारराघव, कंब रामायण, रंगनाथ रामायण, कृर्तिवास रामायण, आनंद रामायण, रामचरितमानस, गीतावली, तत्त्वसंग्रह रामायण आदि प्रख्यात महाग्रंथों में भी इस कथा का विवरण मिलता है।

इस प्रसंग के संक्षिप्त चित्रण करने एवं अहल्या को शिला में बदलने की बात कहना और इंद्र के विषय में कुछ नहीं करने के कारण कालिदास यहाँ इस कथा के संदर्भ में कथात्मक–सौंदर्य एवं काव्यात्मक कौशल दोनों में चुकते नजर आते हैं।

4. बालि–वध

महाकवि कालिदास ने श्रीरामजी द्वारा बालिवध का उल्लेखमात्र किया है। उन्होंने सुग्रीव–बालि युद्ध का वर्णन नहीं किया है। वे कहते हैं–

स हत्वा वालिनं वीरस्तत्पदे चिरकाङ्क्षिते।
धातोः स्थानं इवादेशं सुग्रीवं संन्यवेशयत्।।[9]

महर्षि वाल्मीकि ने सुग्रीव–बालि के मध्य दो द्वंद्व–युद्धों का वर्णन किया है। पहले द्वंद–युद्ध में पराजित होने के उपरांत भी श्रीरामजी के कहने पर और गजपुष्प की माला रूपी पहचान चिन्ह ग्रहण करने के बाद सुग्रीव बालि से युद्ध करते हैं। युद्ध में सुग्रीव को पराजित होता हुआ देख श्रीरामजी छिपकर बालि को एक बाण में ही धराशायी कर देते हैं।

नायक श्रीरामजी द्वारा छिपकर बालिवध करना सचमुच रामजी के उदात्त चारित्रिक–गौरव हेतु अशोभनीय कर्म है, जिसकी आलोचना उचित ही है। यद्यपि वाल्मीकीय रामायण के इस प्रकरण में वानरों द्वारा विलाप करती तारा को समयोचित बातें कहते हुए बताया गया है कि रामजी बालि द्वारा फेंके गए वृक्ष और पत्थर विदीर्ण करते हुए बालि को मारा–

क्षिप्तान् वृक्षान् समाविध्य विपुलाश्च तथा शिलाः।
वाली वज्रसमैर्वाणैर्वज्रेणेव निपातितः।।[10]

परंतु बालि एवं तारा द्वारा लगाए आरोपों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि श्रीरामजी ने छिपकर बालिवध किया। रामजी बालि के प्रश्नों के उत्तर देते हुए अपने वक्तव्य में इन आरोपों को नकारा नहीं है, वे बालिवध करने की औचित्यता और अपने अधिकारादि बताते हैं। इससे यही लगता है कि वानरों द्वारा तारा को कहा गया उपरोक्त कथन केवल समयोचित व्यावहारिकता को दर्शाता है, जिसके अंतर्गत तारा को शांत कराने का प्रयत्न दिखता है।

महाकवि कालिदास इस प्रसंग में सिर्फ रामजी द्वारा बालिवध की बात कहते हैं। वे रामजी द्वारा किस प्रकार वध किए गए इसका उल्लेख नहीं करते हैं, जिससे यहाँ रामजी का उदात्त एवं गौरवशाली व्यक्तित्व पर कोई आँच नहीं आता है। कालिदास ने इस प्रसंग में यद्यपि श्रीरामजी के चारित्रिक उत्थान को अक्षुण्ण अवश्य रखा है, किंतु वे कथा को संक्षेप में चित्रित करने और तारा–विलापादि को छोड़ने के कारण कथानक का वैसा विकास नहीं कर पाये हैं जैसा वाल्मीकीय रामायण में झलकता है। हालाँकि रामकथा के विस्तृत वर्णन का संकल्प न होकर रघुवंश की कथा पर ध्यान होने के कारण ये बातें उपेक्षणीय है।

5. सीताजी की अग्नि–परीक्षा

महाकवि कालिदास ने लंका–विजयोपरांत सीताजी की अग्नि–परीक्षा की घटना की केवल सूचना दी है। वह कहते हैंः–

रघुपति जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रियां
प्रियसुहृदि विभीषणे सङ्गमय्य श्रियं वैरिणः।।[11]

वाल्मीकीय रामायण में रामजी पहले सीताजी के चरित्र पर संदेह व्यक्त करते हैं और उसे त्यागने की अनुमति देते हुए कहते हैं–

तद् गच्छ त्वानुजानेऽद्य यथेष्टं जनकात्मजे।
एता दश दिशो भद्रे कार्यमस्ति न मे त्वया।।[12]

तदन्तर सीताजी अग्निपरीक्षा देती है और अग्निदेव प्रकट होकर उसकी पवित्रता प्रमाणित करते हैं तो रामजी सीताजी को सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं।

महाकवि कालिदास ने इस प्रसंग में रामजी द्वारा सीताजी के प्रति कठोर बर्ताव का चित्रण न करके नायक रामजी के चरित्र का गौरव अक्षुण्ण करने का प्रयत्न किया है। आदिकवि ने मानव–मन की सूक्ष्म एवं वास्तविक चित्रण करते हुए लोकाराधना एवं कुल–गौरव को संतुष्टि प्रदान करने के लिए श्रीरामजी द्वारा कठोरतापूर्ण सीताजी की अग्निपरीक्षा करवायी है। सीताजी की पवित्रता प्रमाणित होने पर वे कहते हैं कि तीनों लोकों के प्राणियों में विश्वास दिलाने के लिए एकमात्र सत्य का सहारा लेकर मैंने सीताजी को अग्निप्रवेश से रोका नहीं–

प्रत्ययार्थं तु लोकानां त्रयाणां सत्यसंश्रयः।
उपेक्षे चापि वैदेहीं प्रविशन्तीं दुताशनम्।।[13]

यहाँ श्रीरामजी के द्वंद्व–ग्रस्त मानव–मन का दर्शन होता है। वे सीताजी की पवित्रता प्रमाणित होने के बाद सीताजी की पवित्रता के प्रति निष्ठा व्यक्त करते हैं, न कि पहले। कालिदास का कथानक यहाँ मानवीय–भावों का स्वाभाविक निरुपण नहीं कर केवल सीताजी की अग्नि–परीक्षा की सूचना देता है। फलतः उनके कथानक उतने प्रभावकारी नहीं होते हैं, जितने की आदिकवि के कथानक होते हैं।

6. पुष्पक विमान द्वारा लंका से अयोध्या वापसी

महाकवि कालिदास ने पुष्पक विमान से श्रीरामादि का अयोध्या लौटने के क्रम में अनुपम काव्यात्मकता एवं कथात्मकता की सृष्टि की है। समुद्र की छटा का कलात्मक चित्रण करने के उपरांत सीताजी को रामजी समुद्र–तट की छटा दिखलाते हुए कहते हैं कि दूर होने के कारण लोहे के हाल समान पतला ताल और तमाल वृक्षों के समूह से काला दिखायी देने वाला यह समुद्र–तट ऐसा दिखायी दे रहा है मानों चक्र की धार पर मुर्चा जम गया हो–

दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला
लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा।।[14]

इसके साथ–साथ रामजी सीताजी को शातकर्णी ऋषि का पञ्चासर सरोवर की क्रीड़ा, सुतीक्ष्ण का तेज, शरभङ्ग ऋषि की साधना, अत्रि–अनुसूया गाथा, गंगा–यमुनाजी का मिलन, निषादराज गुह का श्रृंङ्गवेरपुर का उल्लेख आदि कथा बताते हैं। इसके अलावा हनुमानजी से भरत को अपने आगमन की सूचना देने को कहते हैं। वे सीधे लंका से अयोध्या पहुंचते हैं।

महर्षि वाल्मीकि ने पुष्पक से अयोध्या आने के क्रम में सीताजी के इच्छानुसार तारादि सुग्रीव की प्रिय भार्याओं तथा अन्य वानेश्वरों की स्त्रियों को साथ लेकर अयोध्या पहुँचने की बात कही है। वे सीधे लंका से अयोध्या नहीं पहुँचते हैं। मार्ग में प्रयाग में भरद्वाज आश्रम पर उतरकर महर्षि भरद्वाज से मिलते हैं। हनुमानजी को निषादराज गुह एवं भरत को अपने आगमन की सूचना भेजवाते हैं।

इस प्रसंग में महाकवि कालिदास ने अद्भुत काव्य–सौष्ठव का चित्रण करते हुए अपने कथानक को बड़े कौशल से सृजित किया है। पुष्पक में रामजी द्वारा पहले के कथा–प्रसंगों यथा– निषादराज गुह की कथादि को भी बड़ी सहजता से दर्शाया गया है। यहाँ कालिदास की काव्यात्मकता का स्तर बहुत ऊँचा है।

7. चित्र–दर्शन

महाकवि कालिदास के अनुसार महाराज श्रीराम सीताजी के साथ जिस भवन में रहते थे, उसमें वनवास के समय के चित्र टंगे हुए थे। श्रीरामजी और सीताजी को चित्र–दर्शन से वनवास के दुःखों का स्मरण करके सुख मिलता था। वे कहते हैंः–

तयोर्यथा प्रार्थितमिन्द्रियार्थानासेदुषोः सद्मसु चित्रवत्सु।
प्राप्तानि दुःखान्यपि दण्डकेषु संचिन्त्यमानानि सुखान्यभुवन्।।[15]

चित्र–दर्शन का यह प्रसंग वाल्मीकीय रामायण में वर्णित नहीं है। महाकवि कालिदास ने इस प्रसंग को बड़ी सहजता से चित्रित किया है, वही परवर्ती रामकथा विषयक साहित्य में इस प्रसंग की बहुविध एवं दर्शनीय झाँकी दर्शायी गयी है। महाकवि भवभूति ने अपने महानतम नाट्यग्रंथ 'उत्तररामचरितम्' की उद्भावना 'चित्र–दर्शन' नामक प्रथम अंक के साथ किया है। चित्र–दर्शन के माध्यम से इसमें रामकथा के एक नवीन आयाम की अद्भुत सृष्टि की गयी है।

8. सीता–परित्याग की घटना

महाकवि कालिदास के श्रीरामजी लोकनिंदा को बलवान मानते हुए निर्दोष सीताजी का परित्याग चुपके से अर्थात् तपोवन देखने की इच्छापूर्ति के बहाने करते हैं। वे कहते हैं जिस प्रकार चंद्रमा पर पड़ी पृथ्वी की छाया को लोग चंद्रमा का कलंक मानते हैं और असत्य होने पर भी लोग उसे सत्य मानते हैं, उसी प्रकार निर्दोष सीताजी को भी लोग दोषी मानने लगेंगे। अतः लोकनिंदा से मुक्ति तथा सीता–विषयक लोकापवाद को सर्वथा समाप्त करने हेतु रामजी सीताजी का परित्याग करते हैं–

अवैमि चैनामनघेति किन्तु लोकापवादो बलवान्मतो मे।
छाया हि भूमेः शशिनो
मलत्वेनासेपिता शुद्धिमतः प्रजाभिः।।[16]

रामजी अनुज भ्राताओं को सीता–त्याग की जानकारी आदेशात्मक रूप में देते हैं। लक्ष्मण को उनकी आज्ञा मानने में तत्पर जानकर उसे सीताजी को वाल्मीकि–आश्रम के पास गंगा पार तक पहुँचाने को कहते हैं। लक्ष्मण सीताजी को गंगा पार कराकर उसे परित्यागने की श्रीरामजी की आज्ञा को सुनाते हैं। सीताजी व्यथित होकर रामजी के इस आदेश को उनके कुलकीर्ति पर प्रश्नचिन्ह सदृश बताते हुए रामजी से लक्ष्मण द्वारा कहवाते हैं–

वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा वह्नौ विशुद्धामपि यत्समक्षम्।
मां लोकवादश्रवणादहासो श्रुतस्य किं तत्सदृशं कुलस्य।।[17]

इसके बाद रोती सीताजी को वाल्मीकि मुनि अपने आश्रम में आदर के साथ ले जाते हैं।

वाल्मीकीय रामायण में भी लोकनिंदा को शक्तिशाली मानते हुए रामजी सीता–त्याग तपोवन देखने की सीताजी की इच्छापूर्ति के बहाने से करते हैं। यहाँ लक्ष्मण की इच्छा के प्रतिकूल रामजी सीताजी को वन में उसे ले जाने की आज्ञा देते हैं। गंगा पार करके सीता–परित्याग जनित लोकनिंदा का वाहक बनने के भय से रोते हुए लक्ष्मणजी सीताजी से कहते हैं कि श्रीरामजी बुद्धिमान होकर भी इस लोकनिन्दित कर्म में उसे लगाया, जिससे उसे मृत्यु के समान यंत्रणा प्राप्त हो रही है–

श्रेयो हि मरणं मेऽद्य मृत्युर्वा यत्परं भवेत्।
न चास्मिन्नीदृशे कार्ये नियोज्यो लोकनिन्दितो।।[18]

साथ ही लक्ष्मण सीताजी को वाल्मीकि मुनि की छत्र–छाया में रहने को कहकर चले जाते हैं। सीताजी व्याकुल होकर विलाप करने लगती है तब महर्षि वाल्मीकि को अपने शिष्यों के माध्यम से नारी–रुदन की जानकारी मिलती है और वे आदर–सहित सीताजी को अपने आश्रम में ले जाते हैं तथा रामजी के इस कार्य पर क्रोधित भी होते हैं।

महाकवि कालिदास इस प्रसंग में रामजी के व्यक्तित्व को आदिकवि के रामजी के सदृश ही वर्णित किया है। दोनों लोकनिंदा से भयभीत रामजी का गर्भिणी सीताजी को निर्दोष जानकर भी परित्याग करने का उल्लेख किया है। कालिदास ने लक्ष्मण को सीताजी के त्याग रूपी आज्ञा का पालन करने में उत्सुक दर्शाया है, जबकि आदिकवि ने लक्ष्मण को विवशतावश आज्ञा का पालन करने वाला बताया है। लक्ष्मणजी सीता–परित्याग को लोकनिन्दित एवं कुल के लिए अकीर्तियुक्त मानते हैं। स्पष्टतः वाल्मीकीय रामायण में यहाँ लक्ष्मण के चरित्र की उदात्तता बड़ी कुशलता से दर्शाया गया है।

महाकवि कालिदास ने इस प्रकरण में अनुपम काव्यात्मकता के साथ भावप्रणवता की सृष्टि करते हैं। पतिव्रता सीताजी को वन में छोड़ने हेतु जाते लक्ष्मण को गंगा की लहरें उठ–उठकर मानों हाथ हिलाकर उसे रोकने का प्रयत्न करती है–

गुरोर्नियोगाद्वनिता वनान्ते साध्वीं सुमित्रातनयो विहास्यन्।
अवार्यतेवोत्थितवीचिहस्तैर्जहनोर्दुहित्रा स्थितया पुरस्तात्।।[19]

9. लवणासुर–वधकथा

महाकवि कालिदास के अनुसार शत्रुघ्नजी लवणासुर के वध हेतु जाने के क्रम में जिस रात वाल्मीकि आश्रम में ठहरते हैं उसी रात कुश–लव का जन्म होता है। शत्रुघ्न जी कुछ–लव का जन्म सुनकर प्रसन्न होते हुए अगले दिन लवणासुर के वध हेतु प्रस्थान करते हैं। शत्रुघ्नजी लवणासुर का वध करके यमुना तट पर मथुरा बसाकर एवं अपने पुत्र सुबाहु को मथुरा एवं बहुश्रुत को विदिशा का राजा बनाकर अयोध्या आते हैं। आने के क्रम में वाल्मीकि आश्रम में महर्षि को असुविधा नहीं पहुँचाने के कारण नहीं जाते हैं और सीधे अयोध्या पहुँचते हैं। रामजी से मिलते हैं किंतु उसे पुत्र–प्राप्ति की बात महर्षि वाल्मीकि की आज्ञानुसार नहीं बताते हैं।

वाल्मीकीय रामायण में शत्रुघ्नजी लवणासुर–वध हेतु जाने एवं वापस आने दोनों क्रमों में वाल्मीकीय आश्रम में ठहरते हैं। जाते समय वाल्मीकि आश्रम में सीताजी कुश–लव को जन्म देती है। आने के क्रम में शत्रुघ्न अपने सैनिकों के साथ वाल्मीकि आश्रम में रामायण–गान की वाणी अन्यत्र से सुनते हैं और आश्चर्यचकित हो जाते हैं। सैनिकों द्वारा इस विषय के विषय में पूछने पर शत्रुघ्नजी उसे मुनि आश्रम के आश्चर्यजनक घटनाओं के समान बताते हैं और अगले दिन अयोध्या के लिए निकलते हैं। सात दिनों तक अयोध्या में रहकर पुनः वे मधुपुरी को प्रस्थान करते हैं।

आदिकवि शत्रुघ्नजी द्वारा लवणासुर के वधोपरांत बारह वर्षों के बाद अयोध्या प्रस्थान करते हैं। स्पष्टतः वाल्मीकीय आश्रम में जब शत्रुघ्नजी रामायण–गान की ध्वनि सुनते हैं तो उस समय कुश एवं लव की आयु बारह वर्ष से अधिक रही होगी। साथ ही सात–दिनों तक अयोध्या में रहकर शत्रुघ्नजी पुनः राज्यवश मधुपुरी प्रस्थान करते हैं, जो कि स्वाभाविक ही है। यहाँ आदिकवि के कथानक का स्वाभाविक एवं सटीक विकास दिखता है।

महाकवि कालिदास ने लवणासुर वधोपरांत शत्रुघ्नजी को वापसी में वाल्मीकीय आश्रम में नहीं ठहराकर महर्षि के आश्रम शांति की रक्षा का उचित प्रयत्न किया है। किंतु शत्रुघ्न द्वारा अपने पुत्रों को सदैव के लिए राज्य सौंपकर अयोध्या लौटने की बात ज्यादा उचित नहीं लगती है, क्योंकि उनके पुत्र भी संभवतः छोटे ही होंगे।

यहाँ महाकवि कालिदास की कथात्मक प्रवाह की स्वाभाविकता वाल्मीकीय कथा के समक्ष न्यून दिखायी देती है।

10. शम्बूक–वध

महाकवि कालिदास ने आकाशवाणी के द्वारा ब्राह्मण–पुत्र की अकाल मृत्यु का कारण वर्णाश्रमधर्म–उल्लंघन को रामजी से कहवाया है। रामजी वर्णाश्रमधर्म–उल्लंघन कर्ता शम्बूक को खोजकर उसका वध करते हैं। राजा से दंडित होकर शम्बूक का कठोर तपस्या से भी बड़ी गति मिलती है–

कृतदण्डः स्वयं राज्ञा लेभे शूद्रः सतां गतिम्।
तपसा दुश्चरेणापि न स्वमार्गविलङ्घना।।[20]

रामजी के अयोध्या पहुँचने से पूर्व ही मरा ब्राह्मण–पुत्र जीवित हो जाता है।

आदिकवि ने नारदजी के द्वारा ब्राह्मण–पुत्र के अकाल–मृत्यु का कारण वर्णाश्रम–धर्म उल्लंघन को बताया है। रामजी वर्णाश्रम–धर्म उल्लंघनकर्ता शम्बूक को खोजकर उसका वध करते हैं। शम्बूक वधोपरांत देवगण प्रसन्न होकर रामजी का अभिवादन करते हैं। इंद्रादि देवता प्रसन्न होकर रामजी से वर माँगने को कहते हैं, तब रामजी इंद्र से कहते हैं कि यदि देवगण प्रसन्न हों तो मरा ब्राह्मण–पुत्र जीवित हो जाय। तदन्तर वह जीवित हो जाता है और अपने बंधु के पास चला जाता है।

यहाँ आदिकवि और कालिदास दोनों का कथानक तत्कालीन सामाजिक मर्यादाओं को अक्षुण्ण रखने का प्रयत्न करते हुए दिखता हैं। इसी कारण रामजी द्वारा तपस्यारत शूद्र का वध किया जाता है, जो कि एक अनुचित कार्य है। कालिदास ने यहाँ राजधर्म की श्रेष्ठता की सिद्धि से मृत ब्राह्मण–पुत्र को जीवित करवाया है, जो उनके राज्योचित निष्ठा को दर्शाता है। इससे कथाक्रम की स्वाभाविकता कुछ मायनों में क्षरित होती दिखती है। आदिकवि ने तपस्यारत शूद्र के वध पर इंद्रादि देवता को भावविह्वल दर्शाते हुए रामजी को वर देने का वर्णन किया है तथा वरदान–स्वरुप मरे ब्राह्मण–पुत्र को जीवित भी होते दर्शाया है। सचमुच यह प्रकरण ब्राह्मणवाद की प्रकर्षता को ही चित्रित करता है, जहाँ ब्राह्मण–पुत्र की अकाल मृत्यु का कारण शूद्र की तपस्या को बताया जाता है और उसके वध पर देवताओं को भावविह्वल दिखलाया जाता है। यह मूल वाल्मीकीय कथा–धारा से विपरीत होने से प्रक्षेप ही जान

पड़ता है, किन्तु कालिदास के कथानक का अंग होने से इसकी ऐतिहासिकता को एक मजबूत आधार भी मिलता है, जिसकी चर्चा अन्यत्र उपेक्षित है।

11. श्रीरामजी को कुश–लव की प्राप्ति

महाकवि कालिदास के अनुसार कुश–लव से रामायण कथा सुनकर और इसे महर्षि वाल्मीकि की रचना जानकर अश्वमेघ यज्ञ के मध्य में रामजी वाल्मीकि मुनि को अपने को छोड़कर शेष संपूर्ण राज्य समर्पित कर देने का प्रयत्न करते हैं। तदन्तर महर्षि वाल्मीकि उसे अस्वीकार कर कुश–लव को उनके पुत्र होने की बात कहते हैं और सीता सहित उसे ग्रहण करने का आग्रह करते हैं। रामजी प्रजा के समक्ष सीताजी को अपनी शुद्धता प्रमाणित करने को कहते हैं। सीताजी अपनी शुद्धता प्रमाणित करते हुए पृथ्वी माता की शरण में चली जाती है। सीताजी के स्वर्ण प्रतिमा से यज्ञ संपन्न होता है और दुःखित रामजी कुश एवं लव को साथ लेकर राजभवन जाते हैं।

आदिकवि के अनुसार कुश और लव से रामायण–गान सुनकर और कुश–लव को सीता–पुत्र जानकर महर्षि वाल्मीकि को सभा के समक्ष सीताजी को अपनी पवित्रता प्रकट करने को कहते हैं। सीताजी अपनी पवित्रता प्रमाणित करते हुए पृथ्वी माता के साथ नागलोक चली जाती है। रामजी क्रोधित होकर सीताजी को लौटाने का प्रयत्न करते हैं किंतु इसे भावी मानकर कुश–लव को लेकर यज्ञ संपन्न कर अपने राजभवन लौटते हैं ।

यहाँ कालिदास ने रामायण–गान की उदात्तता दर्शाते हुए रामजी द्वारा महर्षि वाल्मीकि को अपना राज्य अर्पित करने का प्रयत्न करते हुए दिखलाया है। साथ ही वे कुश–लव द्वारा रामायण–गान की अनुपमता को चित्रित करते हुए कहते हैं कि एक तो राम का पावन चरित्र, उस पर वाल्मीकिजी उसके रचयिता और फिर किन्नरों के समान मधुर कंठ वाले बालक लव एवं कुश उसके गायक तब उसमें रह ही क्या जाता है? जिसे सुनकर लोग भावविह्वल एवं पवित्र अंतःकरण वाला न हो जाए–

वृत्तं रामस्य वाल्मीकेः कृतिस्तौ किंन्नरस्वनौ।
किं तद्येन मनो हर्तुमलं स्यातां न श्रृण्वताम्।।[21]

कुश–लव से रामायण–गान सुनते हुए सभा में सीता–स्मरण से जनित लोगों की आंखों से झरते आँसूओं को प्रातःकालीन वनस्थली के वृक्षों से टप–टपानेवाली ओस के सदृश बताते हुए कालिदासजी कहते हैं:–

तद्गीतश्रवणैकाग्रा संसदश्रुमुखी बभौ।
हिमनिष्यन्दिनी प्रातर्निर्वातेव वनस्थली।।[22]

सचमुच कालिदास ने अपनी अनुपम कलात्मक–काव्यात्मक कौशल से कुश–लव के रामायण–गान को जीवंत कर दिया है। साथ ही कथात्मक विन्यासों को भी बड़ी मोहकता से सृजित किया है।

इसके अलावा कालिदास योग की महत्ता दर्शाते हुए लक्ष्मण के स्वर्गगमन की कथा में योगबल से शरीर–त्याग करने की बात कहते हैं, जबकि आदिकवि सशरीर लक्ष्मण के स्वर्गगमन की जानकारी देते हैं।

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार रावण ने ब्रह्मा को अपने शीर्षों को समर्पित कर दिया था, जबकि कालिदास ने रावण द्वारा शिवजी को अपने शीर्षों को समर्पित करते हुए दिखलाया है।

महाकवि कालिदास ने इसके अलावा प्रायः अपनी संपूर्ण रामकथा को वाल्मीकीय रामायण के कथानुसार ही उद्धृत किया है।

वस्तुतः महाकवि कालिदास ने रामकथा की लालित्य एवं मोहकता को अपनी कलात्मक सौंदर्य से विभूषित करते हुए जो शक्ति एवं गति प्रदान की है, वह विरल है। 'रघुवंषम्' की रामकथा में कथात्मक सौंदर्य हो अथवा काव्यात्मक सौष्ठव सर्वत्र कालिदास अपनी महानता प्रदर्शित करते हैं। इसके साथ–साथ वे उत्तरकाण्ड सहित संपूर्ण रामायण की रचना करते हैं, जो उनकी विशेषता को एक नया आयाम देता है। साथ ही इससे यह भी ज्ञात होता है कि कालिदास के समय तक उत्तरकाण्ड सहित संपूर्ण वाल्मीकीय रामकथा लोकगृहित एवं प्रसिद्ध हो गयी थी। महाकवि कालिदास के इस प्रयास का कालांतर में संपूर्ण संस्कृत जगत् पर विशेष प्रभाव पड़ा। महाकवि भवभूति की अमर नाट्य–निधि 'उत्तररामचरितम्' तो उत्तरकाण्ड पर ही आधारित है।

महाकवि कालिदास सचमुच रामकथा के रसिक एवं रचयिता दोनों हैं। उन्होंने रामकथा को जीवन्त ऊर्जा संपन्न बनाने का भरपूर प्रयत्न किया है और इसमें काफी हद तक सफल भी हुए। किन्तु कथाप्रवाह के स्वाभाविक विकास एवं सरसता की समग्र दृष्टि से देखें तो वे वाल्मीकीय रामकथा के वैभव से बहुत पीछे दिखायी देते हैं। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि कालिदास ने दशरथ–चरित को जोड़ने के उपरांत भी मात्र सात सर्गों में ही पूरी रामकथा कही है, जबकि आदिकवि महर्षि वाल्मीकि की रामकथा छह सौ पैंतालिस सर्गों की है। कालिदास का वैशिष्ठ्य कथा की समग्रता अथवा नवीन उद्भावनाओं में न होकर विशिष्ट उक्तियों एवं कवित्वपूर्ण दृश्यचित्रों की प्रस्तुति में है।

निष्कर्ष

महाकवि कालिदास की रामकथा का काव्यात्मक स्वर अत्यंत ओजस्वी एवं उदात्त है, किंतु कथात्मक प्रवाह एवं सरसता का जैसा अनुपम सौंदर्य वाल्मीकीय रामकथा में दिखता है वैसा यहाँ नहीं दिखायी पड़ता है। फिर भी उनका यह प्रयास न केवल रामकथा के लिए वरन् संपूर्ण संस्कृत जगत् के विकास हेतु मील का पत्थर सिद्ध होता है।

संदर्भ

1. कालिदास की ललित की योजना, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, खंड–8 में सम्मिलित, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, तीसरा संस्करण 2007, पृष्ठ–125
2. रघुवंषम् (१/४), महाकवि कालिदास, व्याख्याकार–श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी, चौखंबा सुरभारती वाराणसी, संस्करण–2014
3. रघुवंषम् (६/७६), पूर्वोक्त
4. वाल्मीकीय रामायण (२/६४/५४), हिन्दी भाषांतर सहित, महर्षि वाल्मीकि, प्रथम खंड, गीताप्रेस गोरखपुर, संस्करण–संवत् २०६५
5. रघुवंषम् (६/५७), पूर्वोक्त
6. रघुवंषम् (६/५८), पूर्वोक्त
7. वाल्मीकीय रामायण (१/४८/१६), पूर्वोक्त
8. रामकथा, फ़ादर कामिल बुल्के, लोकभारती प्रकाशन, पुनर्मुद्रण–2018, पृष्ठ–244
9. रघुवंषम्(१२/५८), पूर्वोक्त
10. 10.वाल्मीकीय रामायण(४/१६/१२), हिन्दी भाषांतर सहित, महर्षि वाल्मीकि, प्रथम खंड, गीताप्रेस गोरखपुर, संस्करण–संवत् २०६५
11. रघुवंषम् (१२/१०४), पूर्वोक्त
12. वाल्मीकीय रामायण(६/११५/१८), हिन्दी भाषांतर सहित, महर्षि वाल्मीकि, द्वितीय खंड, गीताप्रेस गोरखपुर, संस्करण–संवत् २०६५
13. वाल्मीकीय रामायण (६/११८/१७), पूर्वोक्त
14. रघुवंषम्(१३/१५), पूर्वोक्त
15. रघुवंषम्(१४/२५), पूर्वोक्त
16. रघुवंषम्(१४/४०), पूर्वोक्त
17. रघुवंषम्(१४/६१), पूर्वोक्त
18. वाल्मीकीय रामायण(७/४७/५), पूर्वोक्त
19. रघुवंषम्(१४/५१), पूर्वोक्त
20. रघुवंषम्(१५/५३), पूर्वोक्त
21. रघुवंषम्(१५/६४), पूर्वोक्त
22. रघुवंषम्(१५/६६), पूर्वोक्त